•अंतर्लोक में महावीर का महाजीवन•

प्रेरणा के परिबल एवं परम आलंबन परमगुरु :

- पूर्वसंस्कार
- परिवार संस्कार
- परमगुरु संग-सत्संग का परम आलंबन
- परिदर्शन : अंतर्लोक में ध्यान, बहिर्लोक में अप्रमत्त प्रतिदर्शन
- परिशीलन ग्रंथों का : उन्मुक्त गुणग्राही तुलना-चिंतन सह
- प्रवास पदयात्राएँ, विद्यायात्राएँ, क्षेत्र-संस्पर्शना, तीर्थयात्राएँ : भ्रमण
- परा-अपरा विद्याध्ययन : गुरुकुलों विश्वविद्यालयों में शांति निकेतनादि
- परिसृजन : प्रथम : 'महावीर दर्शन' का : पंथमुक्त महावीर मूल की खोज
- प्रस्तुति-विशाल विश्वफलक पर : रिकार्ड रूप, प्रत्यक्ष "कल्पसूत्र"-प्रवचन-स्वाध्याय रूप एवं कथा-रूप में।

*

"तुं गति तुं मति आशरो, तुं आलंबन मुज प्यारो रे....,
गरवा रे गुण तुम तणा श्री वर्धमान जिनराया रे...."
— उपाध्याय यशोविजयजी के ये परा-शब्द,
" ते त्रिशला तनये मन चिंतवी, ज्ञान विवेक विचार वधारुं...
— श्रीमद् राजचन्द्रजी के ये प्रेरक-शब्द,
" महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे..."
— श्री भागेन्दु के ये अंतर्ध्यान-शब्द,
" आलंबन हितकारो, प्रभु तुज!"
— श्री सहजानंदघनजी-भद्रमुनि के ये परम आलंबन शब्द,
एवं ऐसे कई परा-वाणी के शब्द मेरे अंतर्गान के प्राथमिक विषय बने। फिर उन शब्दों के अर्थों, भावों, अनुचिंतनों की मेरी अंतर्-ध्यानसंगीत की सरिता बही-ॐकार की दिव्यध्वनि की-ओर बह ले चली एक पूर्ण आलोकमय परमपुरुष के पिंडस्थ, पदस्थ, रूपस्थ ध्यानों के पार के एक महासागर की ओर........

शब्दों, नादों, रूपस्थ सीमाओं के पार अ-शब्द, नीरव-नाद, रूपातीत 'शुद्ध-बुद्ध-चैतन्यघन स्वयंज्योति स्वरूप' का वह महासागर था — अभूतपूर्व परमद्रष्टा, पूर्णपुरुष प्रभु महावीर के अनन्य, अनुपमेय महाजीवन का !

उस के आनंद-दर्शन का, उसमें अंत-निमज्जन का अनुभव अवक्तव्य !! अवक्तव्य !!!

उस 'अनुभवनाथ' को भीतर में जगाने की, उसे साक्षात् करने की, उस परम चैतन्य को इन जड़ शब्दों-गानों से व्यक्त करने की अनुचितता और प्रति-फलश्रुति है इस 'महावीर दर्शन' - महावीर कथा की एक झांकी वत् प्रस्तुति।

महावीर अनुपमेय हैं, अनन्य हैं — विराट हैं, अमाप्य हैं, सर्व से निराले, unique हैं — सबसे बड़े, फिर भी, सबसे निकट! इसलिए, उनके महाजीवन की एक झाँकी, एक झलक भी पाना हम अल्पज्ञों, सीमाबद्धों के लिये असम्भव है।

परमगुरुओं की अँगुलि धरकर एवं अंतर्ध्यान की प्राणसरिता में डूबकर ही उस महाजीवन के महासागर की ओर किंचित् जाया जा सकता है। उनके अंतस्-स्वरूप के महार्णव की ओर !

ऐसे अद्भुत अंतर्लोक में महावीर के महाजीवन का अल्प-सा ही दर्शन कराने जा रही है यह 'महावीर दर्शन' - महावीर कथा की शब्दकृति एवं स्वरकृति..... । यह बाह्य भी है, आंतरिक भी, बाह्यांतर।

अंतर्लोक के अनुभव के इस सूक्ष्म उपक्रम का स्थूल आधार तो अंततोगत्वा शास्त्र साक्ष्य ही होगा। परन्तु सदा ही सोचप्रश्न रहा — ऐसे युगयुगों तक छा जाने वाले एवं लोकालोक को प्रकाशित करने वाले परमपुरुष प्रभु महावीर के महाजीवन का सर्वमान्य - सर्व स्वीकार्य —

अधिकृत आधारग्रंथ कौन-सा ?

- अंतिम श्रुतकेवली युगप्रधान आचार्य भद्रबाहु का 'श्री कल्पसूत्र'
- 'श्री भगवती सूत्र', 'उवसग्ग दसाओ' आदि आगमग्रंथ
- कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य का 'त्रिषष्ठि शलाका पुरुष चरित्र'
- 'महावीर पुराण', 'वर्द्धमान पुराण' आदि दिगम्बर-आम्नाय के चरित्रग्रंथों
- श्रीमद् राजचन्द्र जैसे वर्तमान युगद्रष्टाओं द्वारा लिखित चरित्रादि
- प्रज्ञाचक्षु डा. पंडितश्री सुखलालजी के गहन मौलिक चिंतनों
- यो. यु. श्री. सहजानंदघनजी की स्वयं-वाणी-स्वरस्थ कल्पसूत्र प्रवचन।

notes

ग्रंथ तो अनेक। उन पर भाष्य, टीकाएँ भी अनगिनत।
पर प्रतिनिधि, सर्वाधिक सत्य-निकट का, ऐतिहासिक सर्व-स्वीकार्य तथ्यों का अधिकृत आधारग्रंथ कौन-सा ?

जहाँ अनेक मत-वैभिन्न्य हो, वहाँ आधार शायद दो ही हो सकते हैं :-

1. सर्वाधिक निष्पक्ष सत्यखोजी- सत्यदर्शी सत्पुरुष

"निर्दोष नरनुं कथन मानो, तेह जेणे अनुभव्युं" — श्रीमद् राजचन्द्र — जो कि भगवान महावीर के 'अंतिम लघुशिष्य' रहे हैं, जिस तथ्य के अनेक साक्ष्यों में स्पष्ट साक्ष्य है भगवान के "गणधरवाद" का ही साक्षात् प्रतिरूप गुजराती 'आत्मसिद्धि शास्त्र' की अस्खलित अविच्छिन्न धारा के रूप में, एक ही बैठक में, इस काल में की गई संरचना। गहन तुलनात्मक संशोधन इन दोनों (गणधरवाद — आत्मसिद्धि) का नया ही तथ्य, सत्य उजागर करेगा। इसी कृति के रचयिता के 'वचनामृतों' के महावीर जीवन सम्बन्धित अल्प भी चरित्रांकनों महावीर जीवन-सम्बन्धित अधिकृत जानकारी देते हैं। ये सारे एकत्रित कर परिशिष्ट के रूप में दिये गये हैं और ये सर्व स्वीकार्य हो सकते हैं, होने चाहिये। श्री कल्पसूत्र, त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र, आदि की ये पुष्टि भी करते हैं और अपनी निष्पक्ष, निर्दोष सम्मति भी व्यक्त करते हैं, जिसके अनेक उदाहरण खोजे जा सकते हैं। यथा: महावीर जीवन में माता-पिता की आज्ञा का महत्त्व और यशोदा के पाणिग्रहण युक्त उनका विवाहित जीवन, आदि, जो कि "अविवाहित-का-सा" ही है और श्वेताम्बर-दिगम्बर दोनों आम्नायों के मतवैभिन्न्यों का निरसन कर सकता है — यदि अनेकांतवाद की दृष्टि-उदारता एवं सरल सत्य-स्वीकार-तत्परता अपनायी जाय। प्रसन्नता की बात है कि कलकत्ता के "जैन समाज वीर्य 2001" में प्रस्तुत 'महावीर दर्शन' का यह अभिप्राय दिगम्बरों ने भी माना।

2. तटस्थ, निष्पक्ष, विवेकमय सु-चिंतन के पश्चात् स्वयं के अंतर्ध्यान की गहराई में डूबकर निकाला गया निष्कर्ष — 'जिन खोजा तिन पाईया गहरे पानी पैठ' एवं निम्न प्रेरक उक्ति के द्वारा प्राप्त:—

"शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन, स्वयंज्योति सुखधाम।
बीजुं कहिये केटलुं, कर विचार तो पाम।" (-आत्मसिद्धि 117)

(और कितना, क्या, कहें ? गहन चिंतन करने से पायेंगे अपने शुद्ध बुद्ध स्वयंज्योति स्वरूप को एवं परम सत्य को।)

notes

जो प्रायः इन दो आधारों से गतिशील हुई है हम अल्पज्ञों के महावीर-महाजीवन के आधारभूत ग्रंथाधारों की महाजीवन यात्रा। फिर भी वह खुली है अंतर-साक्ष्य से एवं अन्य किसी बाह्य ग्रंथ साक्ष्य से साक्षात् करने, उसे अपनाने। वर्तमानकाल के सभी सुज्ञ-जनों, महावीर-जीवन के खोजी एवं अधिकृत ज्ञाताओं से विनम्र प्रार्थना है इस सम्बन्ध में अपना अनुभव-चिंतन, अपना अभिनव ज्ञान जोड़ने की ताकि महावीर के महाजीवन को अधिकाधिक सर्वथा सत्याधिकृत, सर्वस्वीकृत रूप में प्रस्तुत किया जा सके। जैसा कि कई वर्तमान खोजी चिंतकों ने ठीक ही कहा है कि त्रिषष्ठि शलाका पुरुषों के अंतर्गत समाविष्ट श्री ऋषभदेव से नेमनाथ-पार्श्वनाथ से एवं श्रीराम-कृष्णादि से भी महावीर चरित्र अधिक समीचीन एवं हमारे जीवन-काल के अधिक निकट होकर हमारी जीवन-साधना के आदर्शरूप है। अस्तु।

इस लेखक-संग्राहक अल्पात्मा की पश्चाद्भूमिका :

पूर्वसंस्कार-परिवार संस्कार :

मंगलमय प्रभु महावीर का महाजीवन - विशेषकर - महामौन एवं ध्यान से भरा हुआ उनका अंतस्-स्पर्शी महाजीवन हमें सदा परमप्रिय रहा है, प्रेरणा-दाता रहा है, आकर्षित बना रहा है।

पूर्वसंस्कार, पूर्वजन्म के संस्कार इस में निःशंक प्रथम निमित्त बने हैं यह उन पुराणपुरुषों की, परमपुरुषों की ही कितनी कृपा-अनंत असीम कृपा।

फिर नित्य सिद्धचक्राराधक, बुलन्द कंठ भक्ति-गाता प्रपिता एवं जिन-तत्त्व-संनिष्ठ पिता एवं पालने में से ही 'आत्मसिद्धि' का गान-श्रवण करानेवाली माता - इन सभी ने श्रीमद् के पदों के संगीतमय गानों से (के द्वारा) हमारी जिनभक्तिसंगीत की यात्रा बाल्यावस्था से ही प्रारम्भ करवा दी थी। परिवार के इन संस्कारों का यहाँ संकेत मात्र ही।

फिर परिवार में ही युवावस्था में पिताजी के द्वारा "मोक्षमाला" प्रदान एवं मरणासन्न सात्त्विक क्रान्तिकार लघु बन्धु (अनुज) द्वारा एक वात्सल्यपूर्ण अनुभव प्रसंग में किसी तीर्थंकर चरित्र, महावीर चरित्र के आलंबन का साधना-आदर्श — संकेत — ये सब परिवार संस्कार निमित्तरूप बनते चले।

हमारे सोलहवें जन्मदिन पर संप्राप्त इस श्रीमद् राजचन्द्रजी प्रणीत "मोक्षमाला" ग्रंथ ने, उसके तत्क्षण-तत्काल के अमरेली (जन्मभूमि) के राजमहल उद्यान एवं स्मशान स्थान के अध्ययन-अनुचिंतन ने, सद्य-जीवन को परिवर्तक मोड़ दिया। यम-नियम-संयमादि बाह्य-साधनों को अपनाने के साथ ही किंचित् अंतर्यात्राएँ भी प्रारम्भ हुईं। ये अध्ययन-अनुचिंतन-अनुशीलन के पश्चात् अंतर्ध्यान के लोक में भी कुछ कुछ गति करने लगीं — वतन के इस उद्यान-स्मशान से प्रारम्भ होकर, बहिर्यात्राओं बीच की ये अंतर्यात्राएँ फैलती रहीं पूना की पर्वती पर्वतिका, नालासोपारा-तुंगेश्वर की पहाड़ियाँ, ईडर-गढ़ और घंटिया पहाड़ की श्रीमद्-गुफाएँ, राजगृही-वैभारगिरि की तलहटियाँ, सम्मेतशिखरजी-पावापुरी जल-मन्दिर की पावन तीर्थभूमियों और भारतभर में कहाँ कहाँ पर कि जिनका कुछ संस्पर्श आगे हम करने जा रहे हैं। तब श्रीमद्जी एवं भगवान महावीर के महाजीवनों का एक आदर्श दृष्टि-सन्मुख जगा था —

"युवावय का सर्वसंगपरित्याग परमपद को प्रदान करता है।"

वर्तमानकालीन श्रीमद् राजचन्द्रजी एवं प्राक्कालीन भगवान महावीर — दोनों के ऐसे बाह्य संसार-जीवन के बीच से चल रहे आंतरिक जीवन के 'सर्वसंगपरित्याग' की आदर्श-धारा सतत यह गुंज-अनुगुंज जगा रही थी —

"अपूर्व अवसर ऐसा आयेगा कभी, कब होंगे हम बाह्यांतर निर्ग्रंथ रे,
सर्व सम्बन्ध का बन्धन तीक्ष्ण छेदकर, कब विचरेंगे महत्पुरुष के पंथ रे।"

तो तब से, पूर्व संस्कार-परिवार संस्कार वश यह प्रबल खोज चल पड़ी श्रीमद् जीवन-महावीर जीवन के बाह्यांतर रूपों की एवं इन "महत्पुरुषों के पंथ पर" चलने की। महत्पुरुषों का यह पंथ कौन-सा था यह विशद रूप से तो आगे दर्शन करेंगे। परंतु इस स्वयं-खोज ने, इन दोनों महत्पुरुषों को मूलाधार बनाकर, उन परोक्ष परमपुरुष परमगुरुओं के वर्तमान में प्रत्यक्ष प्रतिनिधिवत् सद्गुरुओं की शोध एवं संग की ओर, आगे बढ़ा दिया।

परमगुरु संग-सत्संग का परम आलंबन :

इस शोधमें पूज्य पिताजी के द्वारा ही प्रथम परिचय हुआ मुनिश्री भुवनविजयजी (आचार्य श्री भुवनरत्नसूरि) - योगनिष्ठ श्री केसरसूरिजी के

शिष्य जैनमुनि का, जिन्होंने अपने प्रभावपूर्ण प्रवचनों और श्रीमद्जी-आनंदघनजी दोनों के मस्तीभरे पदगानों के द्वारा इन दोनों का आतम-रंग (हम पर) ऐसे नशे-का-सा चढ़ा दिया। इन तत्त्वपूर्ण पदों ने विराट महावीर-जीवन और अद्वितीय तत्त्व-बोध को पाने की जिज्ञासा बढ़ा दी।

सद्गुरुओं के संग-सत्संग के द्वारा यह जिज्ञासा-धारा फिर अनेक रूपों में बहती-विकसित होती गई। मुनिश्री संतबालजी-"संतशिष्य" नानचंद्रजी, 'नादानंद' बापूरावजी, आचार्य विनोबाजी-बालकोबाजी, चिन्नम्मा माता और परमोपकारक प्रज्ञाचक्षु डा. पंडितश्री सुखलालजी, आचार्य गुरुदयाल मल्लिकजी, आचार्य पूर्णानंदसूरिजी-विमलसागरजी-निर्मलसागरजी, उपाध्याय अमरमुनिजी-मुनिश्री सुशील कुमारजी, साध्वीश्री मृगावतीजी-निर्मलाश्रीजी, आर्यिका ज्ञानमती माताजी, श्री जे. कृष्णमूर्ति एवं विदुषी विमला ताई, आदि आदि निकटस्थ-दूरस्थ, स्मृत-विस्मृत अनेक खोजी सत्पुरुष-महावीर के "सत्-पुरुष पंथ" पर चलनेवाले।

इन जिन सब में फिर अधिक प्रभावपूर्ण उपकारक सद्गुरु रहे—यो.युगप्रधान श्री सहजानंदघनजी एवं आत्मज्ञा जगत्माता माताजी धनदेवीजी, श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम हम्पी (कर्णाटक) के अधिष्ठाता।

उन्होंने हमारे जन्मजात, पूर्वोक्त, परमोपकारक परमगुरु श्रीमद् राजचन्द्रजी (के) के प्रति ही जीवन-समर्पण कर रखा था—स्वयं महावीरवत् ही इस काल में महावीर-पथ पर बाह्यांतर दोनों रूपों से, अक्षरशः ही चलनेवाले "अप्पणाणेण मुणि होई" के आचारांग सूत्र एवं "आत्मज्ञान त्यां मुनिपना" के आत्मसिद्धि-प्रतिमानों के अनुसार सच्चे "मुनि" होते हुए भी! लघुता में प्रभुताई से भरे इस अहं-शून्य समर्पित मुनिश्रेष्ठ का अंतर्भाव था~

"अनन्य आत्मशरण-प्रदा सद्गुरु राज विदेह।
पराभक्तिवश चरण में, धरूं आत्मबलि एह॥"

इस गुप्त, मान-विलुप्त सत्पुरुष-सद्गुरुदेव के स्वयं-लिखित "उपास्य पदे उपादेयता", "अनुभूति की आवाज", समझ-सार, आनन्दघन पद विवेचन, सहजानंद-सुधा, सहजानंद पत्रावली, परमगुरु प्रवचन—श्री कल्पसूत्र प्रवचन, दशलक्षण धर्म प्रवचन (अंतिम तीन स्वरस्थ) आदि विशेष दृष्टव्य हैं। फिर उन पर लिखे गये इस पंक्तिलेखक के "योगीन्द्र युगप्रधान सहजानंदघन की साधनायात्रा" My Mystic Master आदि एवं श्री भंवरलालजी

नाहटा लिखित "सिरि सहजानंद चरियं" (प्राकृत+हिंदी), आदि पुस्तक भी कुछ अधिक कहेंगी। परन्तु एक पद में प्रस्तुत उनका यह आत्म-परिचय भी सांकेतिक है—

"नाम सहजानंद मेरा, नाम सहजानंद....
अगम-देश, अलख-नगर-वासी मैं निर्द्वंद्व।" (सहजानंदघन.124)

ऐसे स्वानुभूत, महावीर के अंतर्मार्ग-ज्ञाता, सद्गुरु से, परमगुरु श्रीमद् राजचन्द्रजी के अंतर्बोध को परिभाषित, प्रतिध्वनित करनेवाले तत्त्व को—आत्मतत्त्व को पाने का हमें जो दुर्लभ योग मिला है, वह वर्णनातीत है। आत्म-स्वरूप एवं राजचन्द्रजी–भगवान महावीर दोनों के समान अंतस्-स्वरूप का उन्होंने हमें जो दर्शन कराया है वह अद्भुत है। उन्होंने अत्यंत ही सरल रूप से समझा दिया, प्रतीत करवा दिया कि श्रीमद्जी को समझना, भगवान महावीर को समझना और उन्हें आत्मसात् करना है, अंतर्दर्शन में धारण करना यानि अपनी आत्मा को ही समझना और पाना है।

महावीर के इस 'जिन-दर्शन' में उन्होंने बतला दिया अपनी आत्मा का ही दर्शन—निज-दर्शन। आत्मलक्ष्य धारा—प्रतीतिधारा—अनुभूतिधारा के द्वारा उन्होंने "ध्यानलीन"—सतत सप्तम आत्म-ध्यानलीन ऐसा 'महावीर दर्शन' करा दिया। 'महावीर दर्शन' अर्थात् महावीर के अंतःस्वरूप, आत्मस्वरूप का दर्शन, उनकी अनंत महिमामयी भीतरी आत्मसंपदा का दर्शन। उसी में लीन हो जाने का उन्होंने हमें एक दिन, एकान्त में, अपनी पाट पर से उपदेश दिया था—

"एक स्वयं में स्थित हो जाओ। सब कुछ सध जायगा उससे।"

—कितना सुंदर उनका यह आदेश-बोध था! कितना तारक 'महावीर-दर्शन' का निष्कर्ष!!

सद्गुरु-संग का यह परम आलंबन हमें प्राप्त हुआ। कितना सुंदर हमारा यह सौभाग्य!! यही तो बना हमारे महावीरदर्शन का परम-धन!!

परिदर्शन : अंतर्लोक में ध्यान, बहिर्लोक में अप्रमत्त प्रतिदर्शन

एक आत्म-दर्शन, आत्म-स्वयं-संस्थिति ही बना अब हमारा महावीर-दर्शन। उसीका चला परिदर्शन। अंतस् सृष्टि में उसीका ध्यान और बहिःसृष्टि में—व्यवहार कार्यों में उसका प्रतिफलन।

इस तथ्य की ही प्रतीति, पुष्टि और प्रेरणा देता हुआ एक संदेश हमें मिला।

महावीर जयंती का वह मधुर मंगल प्रभात था। प्रातः ध्यान पश्चात् अचानक, अप्रत्याशित रूप से माउन्ट आबु से कॉल आया। रिसिवर उठाते ही एक प्रबल, प्रांजल, परिचित आवाज सुनाई दी :

"वीतराग महावीर का दिल में ध्यान लगाईए।
कषाय-मुक्त मुक्तिपंथ पर कदम बढ़ाते जाईए।"

झकझोर देनेवाली यह प्रेरक आवाज थी – "श्रीमद्जी में पलभर का भी प्रमाद नहीं और रत्ती-भर का असत्य नहीं" – ऐसा 'अप्रमादयोग' का दर्शन करने-करानेवाली, सदा-सतत ध्यानरत विदुषी दीदी विमला जी की।

उनकी इस प्रेरक आवाज में "ध्वनि थी कषाय-मुक्ति की" जो कि महावीर को अंतस में ध्यान लगाने के उपाय से सहज में ही सिद्ध करनी संभव थी।

सहजानंदघनजी एवं विमलाजी – दोनों गुरुजनों की अंतर्लोक में ध्यान की और बहिर्लोक में उसके प्रतिफलन की यह प्रक्रिया फिर एक कुंजी-सी बनकर अंधकार-अज्ञानांधकार से अवरुद्ध-द्वारों को खोलती गई। अंतस् में ध्यान, बाहर में उसका प्रतिबिंब। प्रथम बंद आँखों से महावीर का, स्वात्मा का ध्यान और बाद में खुली आँखों से भी —

"खुले नैन पहिचानो हँसी हँसी
सुंदर रूप निहारो। साधो, सहज समाधि भली। (कबीर)

खुली आँखों के सहजसमाधिवत् ध्यान का परिचायक फिर उदाहरण दिया है सहजानंदघनजी ने श्रीमद्जी की सहज-समाधि दशा का वर्णन करते हुए —

"व्यापार करते हुए भी सहज समाधि थी उनकी..... और व्यापार भी कितना बड़ा, झवेरी बाजार में व्यापारी बैठे हैं.... सभी को व्यापार के जवाब दिये, पर भीतर की सहज समाधि में कोई फर्क नहीं।

— योगियों की कंदराओं में भी जो असम्भव, वह उन्हें मोहमयी नगरी मुम्बई में बैठकर भी सम्भव था।..!! (परमगुरु-प्रवचन 2)

तो यह 'परि-दर्शन' हमारा भी आधार बन सकता है 'महावीर दर्शन का — महावीर के अंतस्-स्वरूप दर्शन का।

सद्गुरु-परमगुरु-संकेतित, प्रेरित इस परिदर्शन के विषय में अनेक निष्पत्तियाँ और अनुभूतियाँ हैं, जो स्थल-मर्यादा के कारण यहाँ अधिक संभव नहीं।

ग्रंथों का परिशीलन-अध्ययन उन्मुक्त दृष्टि से :

उपर्युक्त 'परिदर्शन' की, बाह्यांतर ध्यानदृष्टि पूर्वक हमारा बाह्य साम्य पाने ग्रंथ परिशीलन भी सदा चलता रहा महावीर के विराट महाजीवन-विषयक। इस उपक्रम में पूर्वोक्त आधारभूत — सर्वाधिक आधारभूत महावीर-जीवनी-ग्रंथ की खोज लगातार बनी रही। सारे सूचित ग्रंथ और जब जब, जो जो मिलते गये, उन सब की। यह खोज अब भी जारी ही है। किसी अध्येता का, विद्वान महाशय का कुछ भी साहित्य उपलब्ध होता है तो हम सानन्द उसका सार पा लेते हैं। जिज्ञासा, गुणतथ्य-ग्राहकता एवं तुलनात्मक उन्मुक्त चिंतन सह।

परिभ्रमण, प्रवास, पदयात्राएँ, विद्यायात्राएँ, क्षेत्र-संस्पर्शनायुक्त तीर्थयात्राएँ :

पुण्ययोग से इन सब के अवसर, अनेक रूपों में, बाल्यावस्था से ही प्राप्त होते रहे। भगवंत के महाजीवन के अध्ययन-परिदर्शन की खोज चली तब से तो एक विशेष दृष्टि बनी रही। सभी क्षेत्र-प्रदेशों के सभी तीर्थों में महावीर जीवन से सम्बन्धित वैशाली, राजगृही, पावापुरी, नालन्दा, आदि आदि प्रभु-पदधूलि स्पर्शित भूमियों का संस्पर्श प्रत्येक बार नित्यनूतन दर्शन कराता रहा, अभिनव अनुभूतियों को जगाता रहा, प्रभु महावीर के अंतः स्वरूप में प्रवेश कराता रहा, नितनये चेतना-संचार कराता रहा। इन बाह्यांतर दोनों प्रकार की यात्राओं से मेरे अंतरलोक में महाध्यानी महावीर का एक अभूतपूर्व विराट, विरल स्वरूप संस्थापित होता रहा। इन अंतरानुभवों की अभिव्यक्ति असम्भव होते हुए भी यदा कदा, कहीं कहीं वह प्रस्फुटित होती रही। इन आनन्दानुभूतियों से युक्त कई कवित कई फूटते रहे, "वन्दन है, हे त्रिशलानन्दन!" एवं "हे वीतराग! हे वर्धमान!" एवं "प्रभु वीर ने विदा जब जग से ली थी...!" — जैसे कई गीत प्रस्तुत

होते रहे, "ध्यानस्थ होते थे जब महावीर" एवं "पावापुरी की पावन धरती से मानसलोक के महावीर" जैसे कई गद्यलेख और, "Mahavira - The Magnificent Master-Teacher of the World", "Universal Visionaries of World-Welfare" आदि अनेक निबन्ध भी लिपिबद्ध होते रहे।

ऐसी सारी सृजन-सम्पदाओं के मूल-उत्स में भी तीर्थों की अनेक क्षेत्रसंस्पर्शनाएँ। कहीं ये स्पर्शनाएँ केवल तीर्थयात्राओं के रूप में, तो कहीं महावीर जीवन-सम्बन्धित परिसंवादों, साहित्य समारोहों, गोष्ठियों, राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों, तो कहीं हमारे ध्यान-संगीत—संगीत द्वारा ध्यान-आत्मध्यान-महावीरध्यान की प्रस्तुतियों के विविध रूपों में चलती रहीं। स्वयं को तो ये सारी "स्वान्तः सुखाय" एवं "स्व-पर-परितृप्तियें" सिद्ध हुई हीं, परन्तु साथ साथ अन्यों को भी। वर्षों पूर्व के 2500 वे महावीर निर्वाण वर्षान्तर्गत, प्रभुनिर्वाण दीपावली की रात्रि का पावापुरी जलमन्दिर परिसर में प्रस्तुत हमारा रातभर से प्रातः तक चला हुआ सितारवादन-युक्त मस्तीभरा धुन-"ध्यानसंगीत" श्रोताओं को भी परमात्मा के उस दिव्यलोक की अंतर्यात्रा कराने में सक्षम बना रहा। यह प्रभु महावीर और उनके पद-पथानुसारी महत्पुरुषों-परमगुरुओं की ही कृपा। अनेक अनलिखित अनुभवों में से, तत्कालीन एक श्रोता का यह है चिरस्मरणीय अनुभव:

पावापुरी के जलमन्दिर पर......

"दिगम्बर-श्वेताम्बर सभी मन्दिर जगमग-जगमग कर रहे थे, छोटे-छोटे रंगीन बल्बों के प्रकाश में। सारा वातावरण थिरक रहा था वाद्य-यन्त्रों पर गाये जाने वाले मधुर भजनों की लय पर। जलमन्दिर में प्रवेश करते ही देखा रंग-मण्डप के मुख्य द्वार पर बेंगलोर से आये श्री प्रतापसिंहजी टोलिया अपनी सितार पर भाव-विभोर कुछ ऐसा गा रहे थे कि सारी सभा बाह्य जगत् को भूलकर अन्तर्जगत में स्तब्ध थी। कुछ ही देर बैठने पर लगा जैसे हम भी समाये जा रहे थे उसी मोहक समाँ में। जब उन्होंने "देह विनाशी मैं अविनाशी" की पुनरावृत्ति प्रारम्भ की तो कौन ऐसा होगा जो समाधिस्थ न हुआ हो? उनकी विश्वास-भरी भावभीनी मधुर आवाज़ ने अभिभूत कर डाला था मेरे समस्त अन्तःकरण को। संगीत समाप्त होते ही ऐसा प्रतीत हुआ जैसे किसी अक्षय आनन्दलोक से पुनः उतर पड़ी इसी चिन्ता-भरी कोलाहलपूर्ण धरती पर...!"

— ध्यानसंगीत की अनजान श्रोता राजकुमारी बेगानी अपनी पुस्तक "यादों के वातायन से" (1975)

स्व. श्रीमती

आनन्दलोक के अन्तर्जगत में ले जानेवाली प्रभु महावीर के परि-निर्वाण की जलमन्दिर की वह पावन-धरा स्वयं परमात्मा के पवित्र देह-परमाणुओं के भस्मकणों के उपरान्त ऐसे ही कुछ समाधिमय देहविलय के पावन परमाणुओं से भी धूलि-धूसरित एवं धन्या बनी हुई थी।

वह रोम-हर्षक घटना जो इसी जलमन्दिर की धरती पर घटी थी वह थी 1975 के इस 2500वें परिनिर्वाण से ठीक 22 वर्ष पूर्व की अगस्त 1953 (श्रावण शुक्ला १०, बुधवार, वि.सं. २००७) की।

वह असामान्य घटना थी प्रभु महावीर के ही पदचिह्नों पर चलनेवाली, "देह विनाशी मैं अविनाशी" की आत्मभावना की धुन को पूर्णतः साकार करनेवाली एक आत्मद्रष्टा जैन साध्वी के निराकार परब्रह्म के साक्षात्कार – शुद्ध बुद्ध स्वयंज्योति आत्मा के साक्षात्कार के उपरान्त संप्राप्त समाधिमरण की, 'मृत्यु महोत्सव' की।

इसी जलमन्दिर पर "मैं अविनाशी" की धुन के पश्चात् हमने श्रीमद् परमगुरु-प्रदत्त "आतम भावना भावतां जीव लहे केवलज्ञान रे" की दूसरी धुन और तत्पश्चात् महायोगी आनन्दघनजी-प्रदत्त "अब हम अमर भये न मरेंगे" की तीसरी धुन जो प्रस्तुत कर जमायी थी, उन्हीं धुनों को हम से कईगुना आत्म-मस्ती में जमाया – आद्यान्त दोहराया – था और परम हंस दशा की, शुद्धात्मा की, सिद्धात्मा की प्रभु वीर की अंतर्दशा का मानो आधार-आलंबन-सी आत्मावस्था भरी समाधि-मृत्यु को पाया था उस साध्वी श्री सरलाने।

उसके अंतर्लोक में था प्रभु महावीर-प्राप्त आत्म-ध्यान का आदर्श और बहिर्जगत् में था श्रीमद्-सद्गुरु की "आतम भावना" धुन के प्रत्यक्ष-प्रदाता सद्गुरु श्री सहजानंदघनजी का सान्निध्य-!!

महाभाग्यवान भी कैसी स्वनाम-धन्या यह साध्वी सरलात्मा श्री सरला, कि जिसने आत्मभाव को भाते हुए, अपने सद्गुरु के सन्मुख ही एवं प्रभु महावीर की इस पावन परमाणु धरा पर ही अपना देहत्याग किया। उनके इस मंगल मृत्यु महोत्सव पर उन्हें अभिवन्दना करते हुए उनके ही इस सद्गुरु ने भी लिखा था: "जिस देह को अवतारी पुरुष भी कायम नहीं रख सके उस देह को ये क्षुद्र-पामर जीव कैसे स्थायी रख सकते हैं? आत्मा वह जब-तब और जहाँ-तहाँ वस्त्र की भाँति देह से अलग होता है। उसमें सरलाने तो महान योगी पुरुषों की भाँति आत्म-स्थिति जागृत कर देह छोड़ा है। साक्षात् दर्शन जिसकी आत्मा में प्रकाशित हुआ था ऐसी श्री सरला की

आत्मा को आत्मभावना से उल्लसित प्रेम से नमस्कार हो! नमस्कार हो!" — यो.यु. श्री सहजानंदघनजी : 19-8-1953 को लिखित पत्र में'।

इस सम्यग्दर्शन-आत्मदर्शन को अपनी आत्मा में प्रकाशित करनेवाली की समाधि-मृत्यु एवं इसी आत्मदर्शन को परिपूर्णरूप से सिद्ध और सुप्रकाशित करनेवाले परमात्मा महावीर के परिनिर्वाण से सम्बन्धित जल-मन्दिर के प्रभु-चरणों की धन्य-धरा पर मैं पहुंचा था। अपनी ध्यानसंगीत-धुन-ध्यान की अंतर्यात्रा आरम्भ करने से पूर्व उस दीपावली की रात्रि को इन महान आत्माओं और अपने परमगुरुओं की प्रेरक आत्माओं का स्मरण-वन्दन किया था। इन सभी आत्म-वैभव संपन्न महान् आत्माओं ने ही तब मेरी आत्मभावना की धुन-प्रस्तुति में प्राण भर दिये थे। उन के बल ने ही अंतर्लोक में सिद्धात्मा प्रभु महावीर के पदस्थ-पिंडस्थ-रूपस्थ ध्यान के द्वारा उनके रूपातीत शुद्धात्म-ध्यान में मुझे संलीन कर दिया था और स्वर-संगीत में उसकी प्रति-ध्रुति झलक कर अभिव्यक्त हो रही थी। तात्पर्य कि यह अल्पात्मा एक निमित्त-मात्र था, माध्यम रूप था सर्वत्र उनका अनुग्रह ही हमें आलोकित कर रहा था और इस प्रकार उनके अंतस्-ध्यान की महिमा और महत्ता सिद्ध कर रहा था।

बहिर्जगत् की तीर्थयात्राओं में अंतर्जगत् की ऐसी अनुभूतियाँ और अभिव्यक्तियाँ, अंतस्-ध्यान ध्यानसंगीत के द्वारा प्रायः सर्वत्र होती रही हैं। यह सब परमगुरुओं की ही कृपा है। अंतर्लोक में महाविराट महामानव महावीर का ध्यान कितना 'त्वरित परिणामी' बनकर अंतस्-क्षेत्र की विशुद्धि-परिशुद्धि कर देने में सक्षम है उसकी यह अनेकों में से एक प्रतीति है। इतना कुछ विस्तार से, सहेतु निरूपण कर उस काल की निकट वैभारगिरि-राजगृही, नालन्दा, समेतशिखर आदि की एवं तत्पश्चात् के सर्व प्रदेशों की तीर्थयात्राएँ, पदयात्राएँ, विद्यायात्राएँ, विश्वयात्राएँ सारी ही ऐसे महावीर महा-ध्यान, शुद्धात्म ध्यान के अनगिनत नित नये अनुभवों से हरीभरी रहीं, अंतस्-क्षेत्रों को लहलहाती बनी रहीं — स्वयं के एवं सर्व के।

महावीर के महाजीवन का, अंतर्लोक में दर्शन-परिदर्शन-प्रतिदर्शन में ध्यान के अभिगम का, उतना ही महत्त्व है जितना उनकी भक्ति का और चरित्र-ग्रंथ चिंतन स्वाध्याय का, जो कि महावीर जीवन दर्शन के चित्रणों में अल्प या प्रायः उपेक्षित रहता है। ये सारे ही अभिगम सही और आवश्यक, प्रभु के तप-त्याग-उपसर्ग-परिषह भी सही और उपादेय, परंतु उन सारे के सारे

के मूल में, उत्स-स्रोत में निहित उनका आत्म-ध्यान ? उनका दीर्घकालीन बाह्योत्तर मौन-महामौन ? क्या इसे हमने विगत 2500 वर्षों में प्राय: विस्मृत नहीं किया - उपेक्षित नहीं रखा ? महावीर के बहिर्-मंदिरों और मूर्तियों का हम पर अपार उपकार रहा, पर क्या हमने उनके, उनसे भी विराट विशाल अंतस्-मंदिरों और अंतस्-मूर्तियों से सभर आत्म-मंदिरों अंतर्ध्यान-मंदिरों को भुला नहीं दिया ? महावीर के मूल मार्ग की इस आत्म-ध्यान की सम्पदा को हमने खोया नहीं दिया ? कहाँ है महावीर का सरल सहज ध्यान का अभिगम ? कहाँ है उनकी समृद्ध ध्यान परम्परा ? कहाँ है उनकी महाप्राण-ध्यान की जीवन-दायिनी प्राणधारा ? महावीर की महान परम्परा के पास ध्यान की यह महा-सम्पदा होते हुए भी हम ऐरे-गैरे-नत्थू खैरों के पास थोड़े-से ध्यान-दान की भीख माँगते भटक नहीं रहे ? चौदह पूर्वों के ज्ञान के धनी होते हुए भी ज्ञान-विमुख विद्या-विमुख बनी हुई हमारी अवदशा की भाँति ही हम ध्यान-विमुख भी बनकर वास्तविक महावीर से कितने दूर जा रहे हैं ? मंदिरों में, तीर्थों में, तीर्थयात्राओं में अवश्य जायँ और साथ साथ इस अंतर-ध्यान-मंदिरों, अंतर्लोक की तीर्थयात्रा को भी जोड़ें।

तभी हमारी तीर्थयात्राएँ पूर्ण होंगी, रत्न-दीपवत् सर्व-प्रकाश्य बनेंगी।

परा-अपरा विद्याध्ययन : गुरुकुलों, शांतिनिकेतनादि विश्वविद्यालयों में

अनेक जैन मुनियों-संतों-आचार्यों के संग अनेक प्रदेशों की पादविहार यात्राओं, विनोबाजी जैसों के चलते-फिरते विश्वविद्यालयों की पद-यात्राओं, नादानन्दजी संगीतगुरु एवं महाप्राज्ञ पं. सुखलालजी आदि के श्रीचरणों-निश्राओं के गुरुकुल वासों, शांतिनिकेतन से लेकर उस्मानिया, बनारस एवं गुजरात विश्वविद्यालयों, पूना-हैदराबाद-अहमदाबाद-ग्वालियर आदि के संगीत विद्यालयों, उरुलीकांचन-पूना जसीडीह-कलकत्ता-हैदराबाद आदि के नैसर्गिक चिकित्सालयों, इत्यादि अनेक स्थानों में हमारी परा-अपरा दोनों प्रकारों की विद्या-प्राप्ति की जिज्ञासा-पूर्ति का सुदीर्घ पुरुषार्थ चला। उसकी भी लंबी कहानी है। परन्तु इन सभी के बीच हमारी आत्मखोज एवं महावीर-खोज की

कहीं विस्मृति नहीं हुई। किसी को इस काल में शायद ही लाभ हो ऐसा अनेक क्षेत्रों के, अनेक महान गुरुजनों का हमें अपार लाभ प्राप्त हुआ। यह सारा जन्मजात जिनधर्म का, उपकारक माता-पिता का एवं महान उपकारक परमगुरुओं का ही प्रताप और परमोपकार। इस गुरुगम से संप्राप्त तत्त्वदर्शन, साहित्य, संगीत, निसर्गोपचारादि अनेक परा-अपरा विद्याओं के साथ सदा ही उपर्युक्त आत्मखोज और आत्मार्थदृष्टि सजग बनी रही, बन सकी, यह हमारा अपरम ही परम सौभाग्य।

अध्ययन-काल के पश्चात् महाविद्यालयों के विविध-स्थानीय दीर्घ अध्यापन-काल और लेखन-सम्पादन काल में भी यह दृष्टि स्थायी रही और ध्यान-धारा भी नित्यनूतन रूपों में प्रवाहित होती रही। इस का भी फिर एक इतिहास है।

इन सभी से फिर निष्पन्न हुई जिनभक्ति, जिन-ध्यान, जैनदर्शन साहित्यादि आधारित संगीतधारा, ध्यान-संगीत धारा : श्री आत्मसिद्धि एवं श्री भक्तामर स्तोत्र से लेकर शताधिक रिकार्डों के निर्माण के रूप में।

यहाँ भी जिन-चरित्र महावीर चरित्र केन्द्रस्थ रहे।

[मुंबईकृपा से] इसी बीच देश-विदेश में 25 बार हमारा 'कल्पसूत्र' पर्युषण-प्रवचन क्रम चला।

परिसृजन : प्रथम 'महावीर दर्शन' का, पश्चात् 'दादागुरु दर्शन', 'बाहुबली दर्शन' आदि का — पंथमुक्त संप्रदायातीत महावीर मूल की खोज का।

उपर्युक्त सारी विद्या-साधनाओं, तीर्थयात्राओं, ग्रंथानुशीलनों, गुरुगम मार्गदर्शनों एवं स्वानुभव-ध्यानों की फलश्रुति रूप एक दर्शन — अंतर्दर्शन हुआ महावीर के अंतरस्वरूप का। उस दर्शन के केन्द्र में सर्वत्र प्रकाशित और ध्वनित होता रहा उनके आत्मज्ञान का सर्वोपरि बोधमंत्र "जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ"। इसी के इर्दगिर्द, प्रमुखरूप से श्री कल्पसूत्र एवं श्रीमद् राजचन्द्रजी के आत्म-दर्शन आधारित महावीरजीवन एवं दर्शन का सहज रूप से निर्माण होता चला। महावीरदर्शन (हिन्दी LP) के प्रथम परिसृजन के रूप में 2500 वे निर्वाणोत्सव समय। तब से हमने कालेज-अध्यापन का (सत्यसांईबाबा कालेज विभागाध्यक्ष-कार्य का) सदा के लिये त्याग कर भगवान महावीर एवं जिनवाणी सरस्वती के चरणों में (जोखिम भरा फिर भी प्रसन्न) जीवन समर्पण किया। (प्रतिकूलताओं) के बीच से भी हमारी जीवनयात्रा चली। दिवंगता विदुषी ज्येष्ठा सुपुत्री कु. पारुल ने म.द. का अंग्रेजीकरण किया और जीवनसंगिनी सुमित्रा ने गुजराती रूपांतरण। 2600 वे महावीर जन्मोत्सव (2001) कलकत्ता से लेकर अब विशाल विश्व-फलक पर प्रस्तुत है "महावीर दर्शन"।

[बेंगलोर, 19-5-2011 ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ — प्रा. प्रतापकुमार ज. टोलिया]

देखा जाय

⊛ अंतिमा :

अंत में, इस प्रकार विशाल विश्व-स्तर पर महावीर दर्शन-महाजीवन कथा प्रस्तुत करने जाते समय हमें थोड़ा-सा विनम्र प्रतिपादन करना है। हमारी स्वयं की इस सृजन की पश्चाद्भूमिका स्पष्ट करते हुए और हमारे भीतर के "अंतर्लोक में विराजित, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, सर्वस्पर्शी महाध्यानी महावीर" की स्वल्प झलक का प्रकट प्रतिदर्शन कराते हुए, सार-संक्षेप के रूप में, हमें जो कहना है वह यह है:—

हम अल्प होते हुए भी, महावीर, महावीर की अंतर्चेतना, महावीर की महाध्यान-सम्पदा, महावीर की आत्मज्ञान-केन्द्रित अलख-अलौकिक अनन्य-अद्वितीय साधना हमारे लिये सब कुछ है, आदर्श रूप है, परम आलंबन स्वरूप है। महावीर-दर्पण में, महावीर के दर्शन-प्रतिदर्शन में, हमें अपना-अपनी सिद्ध समान शुद्धात्मा को देखना है। वे ही हमारे गति-मति हैं, वे ही हमारे आश्रय-आलंबन —

"तू गति, तू मति, आशरो, तू आलम्बन मुज प्यारो रे;
'वाचकयश' कहे माहरे, तू जीव जीवन आधारो रे .....
गरवा रे गुण तुम तणा
श्री वर्धमान जिनराया रे —"
सुणतां श्रवणे अमी झरे, मारी निर्मल थाये काया रे —" (यशोविजयजी)

— ऐसे निर्मलता-प्रदायक, जीव जीवन आधार रूप हैं महावीर। (वे) महाकरुणावंत महा-लोकालोक प्रकाशक, महाध्यानी-महाज्ञानी-महातपस्वी महावीर का जीवन-मध्यवर्ती केन्द्र, मर्म-रहस्य, सर्वोपरि साध्य क्या था? आत्मा! अनंत वीर्य आत्मा!! सर्व काल-सर्व समयों का सार आत्मा!!! इस आत्म-केन्द्रित ध्यानमय अप्रमत्त आराधना थी उनका पुरुषार्थ। ऐसे सत् पुरुषार्थ सतत सजग पुरुषार्थ से ही वे मानव से महामानव बने। बस ये महाकरुणाकारी महावीर, मानव से महामानव और महामानव से महासिद्ध बनकर ऊर्ध्वलोक-सिद्धलोक के सर्वोच्च सिद्धपद पर विराजित महावीर हमारे अंतर्लोक में भी सदा-सर्वदा विराजित हैं। हृदयकमल-सिंहासन-आरूढ़ ये अनंत असीम सिद्ध परमात्मा अपने वर्तमान में प्रवर्तमान प्रतिरूपों से हमें नित्य अपने संदेश-आदेश-आज्ञा भेजते रहते हैं—उनके ध्यान के द्वारा एवं उनके इन वर्तमान-प्रतिरूपों, प्रतिनिधियों के द्वारा। उनके ऐसे अनेक प्रतिरूप, प्रतिनिधि-स्वरूप हैं उन्हीं की आदेशाज्ञा-आरूढ़, उन्हीं के पदचिह्नों पर सतत अप्रमत्त सत्-पुरुषार्थ लिये चली हुई कुछ सिद्धसमान धन्य आत्माएँ, जिनके सिद्ध-स्वराजमय संगीत-साज से यह दिव्यध्वनि संकेत होता रहता है: "सर्व जीव हैं सिद्ध सम, जो समझे बन जाएँ। सद्गुरु आज्ञा, जिनदशा, (दो) निमित्त कारण मांहीं॥"

(—श्रीमद् राजचन्द्र : आत्मसिद्धि शास्त्र 135)

ऐसी सर्व सिद्ध समान वर्तमान धन्यात्माओं का स्मरण, दर्शन-स्पर्शन, वन्दन करते हुए इस कालमें, हमारे जीवन में सर्वाधिक उपकारक, सर्वाधिक निकट बने हुए "परमपुरुष प्रभु सद्गुरु" के उन परम सौभाग्य, परम सान्निध्य, परम उपकार प्रतिवेदित किये बिना हम कैसे रह सकते हैं? महापुरुषार्थी महामानव महावीर का ही प्रतिरूप, प्रतिनिधि स्वरूप, प्रति-दर्शन हमने उनमें पाया है यह हमारा महाभाग्य है।

इन अनेक वर्तमानकालीन प्रकट-अप्रकट पूजनीय परमपुरुष परमगुरुओं के प्रत्यक्ष दर्शन, निश्रागत सान्निध्य, समागम-गुरुगम-साक्षात्कार का हमें परम लाभ प्राप्त हुआ। प्रायः उन सभी में हमें महावीर की अंतरचेतना के सतत अप्रमत्त पुरुषार्थ साधना के ही दर्शन हुए — कहीं आंशिक, कहीं अधिक समग्र संपूर्ण रूप में। नाम कितने गिनायें?.... उन्हीं में से महावीर की करुणा और अहिंसा-अपरिग्रही अकिंचनता-अनिकेतता को युगानुरूप नयरूप में प्रकट-प्रतिबिंबित करनेवाले महात्मा गांधीजी-आचार्य विनोबाजी, महावीर के अनेकाँतिक अनेकरूपी मर्मों को — रहस्यभरे जीवनदर्शन को अनगिनत ग्रंथों के गहन सागर में जीवनभर डूबे रहकर अनमोल मोती खोज के लानेवाले महाप्राज्ञ प्रज्ञाचक्षु पंडितश्री सुखलालजी, महावीर के प्रेम, भूतदया, प्रकृति-प्राणीप्रेम, मानवसेवा, विश्वकरुणा को अपने जीवनमें उतारनेवाले रवीन्द्रनाथ-अंतेवासी गुरुदयाल मल्लिकजी, आनंदघनजी के आतम-रंग-प्रज्ञा-पदों के द्वारा पदस्थ-ध्यान की ओर अग्रसर करानेवाले आचार्य श्री भुवनरत्नसूरिजी, तंबूर पर भक्तिसंगीत-मस्ती सिखानेवाले बालकोबाजी एवं सितार पर नादसंगीत शिक्षादाता नादानंद बापूरावजी, फिर "नादानंद", "शब्दानंद" से भी पार "आत्मानंद" का दर्शन करानेवाली (अन्यलिंगी सिद्धवत्‌ होकर भी) और महावीर की आत्म-तत्त्व चेतना एवं चिन्तना को चिरंतन बनानेवाली अज्ञात ज्ञानयोगिनी चिन्मन्मा माता। महावीरवत् अनेक उग्र-तपस्याएँ, प्राणीकरुणा एवं महावीर पर उपसर्गों-परिषहों बीच आत्मध्यान धारा को अखंड रखकर, आतमभावना भक्ति की प्रमत्त-मस्ती जगाकर, देहभान को स्वयं भूलने और सब को भुलाने-छुड़ानेवाली "प्रसिद्धि-निस्पृही-निष्कामी" "जगतमाता" आत्मज्ञा धनदेवीजी; महावीर की आत्मभाव-चेतना-ऊर्जा को अपने जीवन में आत्मसात कर उनके ही निर्वाणस्थान पावापुरी जलमंदिर पर आत्मसमाधिमय देहत्याग करनेवाली साध्वी श्री सरला जी और महावीर के अंतरस्थ ध्यान द्वारा कषाय-मुक्त मुक्तिपथ की मार्ग दर्शिका बनकर, जीवनयात्रा के द्वारा आत्मा का देहातीत स्वरूप साक्षात्‌ कर, माउन्ट आबु पर विदेहस्थ बननेवाली विदुषी दीदी विमलाजी — कितकितने नाम लें? सूची अधूरी ही रही है।

इन सर्व में हमारे इस जीवन पर सर्वाधिक साक्षात् प्रभाव डालने वाले और महावीर चेतना को अधिकाधिक प्रवाहित एवं पुष्पित करने वाले प्रेरणादाता और ही थे।

वर्तमानकाल में महावीर के सर्व साधना-गुणों को अपने जीवन में उतारनेवाले, जीवन जीने की महावीरवत् ही संपूर्ण साधना-पर्युपासना करने-वाले, महावीर-बोध को आधिकारिक रूप से स्वयं आत्मसात् कर व्यक्त करनेवाले ये दो सत्पुरुष-सद्गुरु-परमगुरु हमें प्राप्त हुए यह हमारा परम सौभाग्य, परम पुण्योदय। दूरस्थ : काल-दृष्टि से 2500 वर्ष पूर्वस्थ एवं क्षेत्र-दृष्टि से ऊर्ध्वलोकस्थ ऐसे 'महतोऽपि महीयान' महामानव महावीर का महाधारवत् प्रतिरूप हमने इन दोनों में अंश रूप में – लघुरूप में देखा है। महावीर महान है, निस्सन्देह महान हैं, महासिद्ध हैं, पर वे अब दूर हैं.... बहुत-दूर... पूर्णरूप से ऊपर सिद्धालय में...! वे सागर-महासागरवत् हैं, परन्तु उनसे ही निर्मल शीतल जल पाये हुए ये दोनों परमपुरुष छोटे-से जलकुंड रूप ही सही, निकट हैं। हमारी अंतस्-तृषा मिटाने में, हमें हाथ पकड़ कर ऊपर उठा ले जाने में, अपनी अँगुलि पकड़वाकर महावीर का दर्शन-अंतर्दर्शन, प्रतिदर्शन-परिदर्शन पूर्णरूप से कराने में समर्थ हैं।

कौन हैं ये परमपुरुष ?

एक तो इस काल में, इस क्षेत्र में महावीर वत् महावीर-का सा ही साधना जीवन (उदयानुसार बाह्यदशा भिन्न होते हुए भी अंतरअविदशापूर्वक, अप्रकट, गुप्त, मौन रूप से) जीनेवाले, उनकी-सी ही अंतर्ध्यान – आत्मसातत्य की अप्रमाद-युक्त आराधना अपनाये हुए, परम ज्ञानावतार युगप्रधान, निष्कारण करुणा-वंत परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचन्द्रजी.... (विमला ताई के शब्दों में "उनके आत्मजागृत जीवन में पल भर का प्रमाद और रति भर का आलस्य नहीं था।")

और दूसरे हैं – श्रीमद्जी को ही अनन्यभाव से समर्पित, स्वयं मुनिवर एवं देव-प्रदत्त "युगप्रधानपद"-धारक होते हुए भी प्रभुश्री लघुराजजी वत् लघुताधारी, अहंशून्य, विनम्रतामूर्ति ऐसे योगीन्द्र श्री सहजानंदघनजी – भद्रमुनि।

एक महावीरवत् ही आत्म-सम्पदा-बीज सम्पन्न, उदयाधीन अवशिष्ट कर्म-भोगी गृहवासी – रत्नव्यापारधर्मी, अपूर्व अवसर-आकांक्षी, 'आत्मसिद्धि' – संप्राप्त अर्ध्वरेता – जिन्होंने बीच बीच में महावीरवत् ही कुछ वनप्रदेशों, ईडर आदि पहाड़ों में एकाकी मौनध्यानपूर्वक विचरण कर, बाहरी-भीतरी अंतर्गुफाओं में प्रवेश कर, समाधिस्थ बन, महावीर के अंतस्-स्वरूप की आत्मचेतना को प्राप्त किया। प्रायः गुप्त और अप्रकट रहकर गाँधीजी, लघुराजजी, सोभागजी, अंबालाल, जूठाभाई आदि थोड़े ही 'अधिकारी' जनों को यह आत्म-चेतना प्रदान कर, तैंतीस वर्ष की अल्पायु में ही 'बीज-केवली दशा' प्राप्त कर, आत्मस्वरूप में लीन होकर, उन्होंने महाविदेह क्षेत्र को प्रयाण कर दिया – पूर्ण परमपद – प्राप्ति की आगामी यात्रार्थ।

V. Imp
(BOLD TYPE)

दूसरे, महावीर और श्रीमद् दोनों के पदचिह्नों पर चलने, युवावस्था से ही, स्वयं पूर्वजन्म-साधना के अंतरादेशानुसार, "सर्वसंग परित्यागी" प्रथम मुनिदीक्षाधारी एवं पश्चात् गिरिकंदरा-गुफावासी। इन दोनों के एक एक पद, एक एक वचनामृत, महावीर-बोध की ही प्रतिछाया रूप है।

इस पंक्तिलेखक अल्पात्मा के लिये तो प्रथम सत्पुरुष थे ध्यानगम्य पूर्वजन्म–परोक्ष (पर जन्मजात परिचित-से!) और दूसरे वर्तमान जन्म-प्रत्यक्ष (अल्प-कालखंड के लिये भी सही!)। दोनों की अनुभूति-प्रतीति-लक्ष्यधारा ने हमें परिप्लावित कर दिया। अपनी धारणा/ग्रंथादि

प्रधानरूप से, पूर्वोक्त अन्य उपकारक परमपुरुषों के उपरान्त एवं अन्य परिबलों के बावजूद, इन दोनों परमगुरुदेवों के गुरुगम से प्राप्त दृष्टिदान से – आत्मानुसंधानयुक्त अंतर्ध्यान से – इन दोनों के साक्षात् महावीरवत् जीवनदर्शन से परिनिर्मित हुआ है यह महावीर-दर्शन, महावीर-महाजीवन-संदर्शन, महावीर कथागान निरुपण। इसमें हमारा प्राय: कुछ नहीं, मेरा मुझ में कुछ नहीं है।"... प्रेरणा,

सुदूर अतीत से महावीर के महाजीवन की परिकल्पना और अंतश्चेतना, इन दोनों के वर्तमान के जीवन से हमें मिली। महावीर की आत्म-स्वरूप आधारित, अंतर्-बाह्य मौनध्यानयुक्त, अप्रमत्त जीवन साधना। कैसी "परिस्थिति-प्रभाव मुक्त" ज्ञाता-द्रष्टा भावयुक्त, हो सकती है और सत्पुरुषार्थ – आत्मज्ञान के द्वारा आज वर्तमान में भी सम्भव और सिद्ध हो सकती है, यह हमने इन दोनों से जाना, समझा और सीखा। उन सबका प्रतिदर्शन है यह छोटा-सा "महावीर दर्शन"। इसमें सर्वत्र इन दोनों की आत्मानुभूतियाँ प्रतिध्वनित हैं।

उपर्युक्त ग्रंथाधार, अध्ययन-अनुशीलन, प्रबुद्धजन-विचारविमर्श, ऐतिहासिक जीवनस्थान-क्षेत्र-संस्पर्शन, स्वयं के अंतर्लोक में ध्यान-साधन, आदि अन्य परिबल इस गुरुगम की पूर्ति में ही हैं।

महावीर-प्रणीत आगमज्ञान, आत्मज्ञान एवं आत्मध्यान का मार्ग आज जब अधिकांश में लुप्त-विलुप्त है, तब यह महावीर दर्शन किंचित् नूतन प्रकाश शायद डाल सकता है, अभिनव दृष्टि-प्रदान कर सकता है, यह श्रद्धा है।

इस दर्शन का प्रति-दर्शन-अनुचिंतन कितना सक्षम और सिद्ध हुआ है इसका निर्णय सज्जन, प्रबुद्ध और खुले दिमाग के गुणग्राही श्रोता-द्रष्टा-अंतर्द्रष्टा करेंगे और हमें सूचित भी करेंगे यह विनम्र अनुरोध है, प्रार्थना है। सभी के लिये, विशेषकर ज्ञानार्थी-साधनाकामी युवा-पीढ़ी के लिये यह प्रयत्न ज्ञेय एवं उपादेय हो ऐसी परमगुरु देवों के प्रति हमारी विनय-वंदना सह प्रार्थना है।

"महावीर दर्शन" के इस परिश्रम-साध्य निर्माण में जितना श्रेय, जितना उपकार उपर्युक्त सभी गुरुजनों एवं परिबलों का है, उतना ही

हम कौन? अल्पात्मा को नमः

मिलाएँ कलाकारों,
सहयोग, मित्रों, छात्र-छात्राओं एवं विशेषकर हमारे स्वजन-परिजनों का (धर्मपत्नी सुमित्रा, स्वर्गीया ज्येष्ठा सुपुत्री कु. पारुल M.A. Gold Medal-1st, 7 Awards-Winner, 7 Books' Author, ने प्रेरणा एवं सुवक्ता द्वितीय सुपुत्री चि. डा. वन्दना, N.D., कलाकार सेवासंनिष्ठ तृतीय सुपुत्री चि. भविता M.A., व्यवस्था-निपुण कॅनेडा-स्थित चतुर्थ सुपुत्री चि. फाल्गुनी एवं संगीत-नृत्य-साहित्य-विद् पंचम सुपुत्री अमरिका-स्थित चि. किन्नरी, M.S. Media Communications एवं समर्पित भतीजे चि. मुकेश-कमलेश, चि. बाबुभाई-अंकित-कुशल) इनके अतिरिक्त अनेक नाम-अनाम प्रबुद्ध मित्रों डा. धनवंत शाह, डा. जितेन्द्र शाह, डा. कुमारपाल देसाई, श्री. सूर्यकांत परीख, श्री. शांतिलाल गढ़िया, श्रीयुत मधुभाई पारेख एवं वसंतभाई खोखाणी, श्री. मनहरभाई कामदार, श्री. ज्योतिबाबु नाहर, श्री. मनुभाई पटेल, श्री शशीकान्त महेता.................इत्यादि का भी अनेक रूपों में हम ऋण-स्वीकार किये बिना रह नहीं सकते।

आखिर यह महावीर दर्शन सभी का है ठीक वैसे ही जैसे स्वयं महावीर। क्या महावीर मुक्त-उन्मुक्त, असीम महावीर किसी एक सीमा के, एक समुदाय के, एक संप्रदाय के हो सकते हैं? मेरे अंतर्लोक के महा-ध्यानी महामानव महावीर न केवल मूर्तिपूजक जैनों के हैं, न प्रतिमा-प्रतिपक्षियों के; न दिगम्बरों के - न श्वेताम्बरों के। वे जन-जन के हैं, शांति-कामी सभी मनुष्यों के हैं, आत्मज्ञान के सभी अभीप्सुओं के हैं, सम्यक आत्मध्यान के सभी साधक-ध्याताओं के हैं, सचराचर भयाक्रान्त-दुःखाक्रान्त समस्त जीवसृष्टि के हैं, विश्व विराट के हैं।

सर्व-शेषांत में, हमारे अंतर्लोक के महाध्यानी और समन्वयी-स्याद्वाददर्शी निष्कारण करुणावंत महावीर के जीवन दर्शन का, महावीर दर्शन (बहिर्जगत + अंतर्जगत दोनों) का सार-निष्कर्ष है - उनके सारे धर्म वैभव के सन्दर्भ में :-

(1) अभावग्रस्तों एवं संपन्नों का समान विभाजन एवं साधन-प्रदाता न्याययुक्त वैभव।
(2) आचार पूर्ण "अपरिग्रह" का स्वीकार एवं गुप्त-दान युक्त संपत्ति-वितरण। नीतिमय व्यापार।
(3) आनंदादि श्रावकों की भाँति विशाल गोकुल-गोपालन और सारी वधशालाओं का समापन/निकरण।
(4) अहिंसा का व्यापक प्रयोगरूप समग्रता में आचरण - जो अपरिग्रह बिना असम्भव।
(5) अभक्ष्य, अशुद्ध आहार त्याग, सात व्यसन त्याग, प्रमुखतः रात्रिभोजन त्याग।
(6) चातुर्मास-वास पर्याप्त, साधनार्थ आश्रमों-मठों का नहीं, "जैनविद्या" की विद्यापीठों का निर्माण।
(7) "आरुग्ग-बोहिलाभ-समाहि" प्राप्ति में आरोग्य-प्राप्ति की आत्मभानपूर्वक अथवा, महत्ता।
(8) एकान्त-मताग्रह नहीं, अनेकान्तिक स्याद्वाद-शैली, समन्वय-दृष्टि की सर्वत्र आचरणा।
(9) निश्चय-व्यवहार दोनों का संतुलन रखते हुए बाह्य जड़क्रियाओं के बजाय आत्मभाव युक्त क्रिया-साधना।
(10) नाम-रूप दोनों की आवश्यकता रूप, ध्यान का निमित्त, ऐसी प्रतिमापूजा, परंतु बाह्याडम्बर शून्य।
(11) स्वरूपानुसंधान-दाता, कषाय-मुक्ति-प्रदाता, जिनकथित आत्मध्यान-मार्ग की पुनर्स्थापना।

(12) भक्ति - जिनभक्ति की अतिशुद्ध भाव से, देह-भान से मुक्त करानेवाली बिना-तमाशे की-आराधना।
(13) आत्मज्ञान, अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकांत आदि के प्रबल प्रयोग द्वारा राज्य, देश पर प्रभाव।
(14) क्रिया से प्रथम और अधिक भाव को एवं श्रुतज्ञान स्वाध्याय सह ध्यान को प्राधान्य।
इस के द्वारा प्रथम परिवार-जीवन में, फिर समाज और देश में शांति-संवाद स्थापना।

ऐसा यह समन्वय-स्याद्वाद-संवादिता-समग्रता-आत्मशांति एवं आत्मज्ञान-आत्मध्यान से संपन्न महावीर दर्शन एक संपूर्ण जीवन दर्शन है, जीवन मार्ग Way of Life, एक सुनियोजित जीवनक्रम chalked out & planned Program of Life है, इह-परलोक उभय के लिये महामंगलकारी है - विशेषत: जीवनपथ को खोजनेवाली नूतन पीढ़ी युवा पीढ़ी के लिये, जिन के लिये महावीर कभी अप्रासंगिक irrelevant नहीं, अति विशेष-प्रासंगिक है वर्तमान के इस अशांत, भयाक्रान्त, आतंकित युग में!

इस में प्रातः से रात तक एवं जन्म से मृत्यु तक अप्रमाद में सावधानीपूर्वक, निजी होश-आत्मभानपूर्वक, शांति, समता और आनंद के साथ कैसे जिया जाय इस कला का सुस्पष्ट निरूपण है। अपने आप को भुलाये बिना कैसे सारी प्रवृत्ति की जाय उसकी कुंजी, युक्ति मार्गदर्शन है। इस सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की अद्भुत सृष्टि में, अंतर्लोक में आइए, स्वागत है।

आयें, ऐसे सुंदर, सुखद, जिनाज्ञामय सुख-शांतिदायक जीवनदर्शन - महावीर महादर्शन को हम क्यों न अपनायें? क्यों न उनके-से ऊर्ध्वगमन के द्वारा उस दुरतीत आनंदलोक (सिद्धलोक) को पायें?

प्रथम यहीं और अभी ही।

(विदा की बेला) विदा-वीर जिनेश्वर की भाव-वन्दना करते हुए, उनके वीरत्व की अभीप्सा-कामना करते हुए, उनके चरणों का अनन्यभाव से शरण-ग्रहण करते हुए, परमभक्तिपथ उनके वर्तमान स्वरूपों के प्रति आत्म-बलि धरकर सर्वभाव से समर्पण करते हुए, उनके इस अक्षय दर्शन - महावीर दर्शन - अपने अंतस्-स्थित आनंदघन प्रभु महावीर को हम जगायें - अपने सुप्त आतमराम को चिर-नींद से उठायें:-

"वीर जिनेश्वर चरणे लागुं, वीरपणुं ते मागुं रे;
वीरपणुं ते आतम ठाणे, जाण्युं तुमची वाणे रे;
ध्यान विज्ञाने शक्ति प्रमाणे, निज ध्रुवपद पहिचाणे रे। वीर॰
आलंबन साधन जे त्यागे, पर परिणतिने भागे रे;
अक्षय दर्शन ज्ञान वैरागे, आनंदघन प्रभु जागे रे। वीर॰"

(-महायोगी आनंदघनजी : "पद्य रत्नावली")

साफल्य मानें, हमारा परम भाग्य समझें कि हमें प्रभु वीर का

महाशासन मिला, 'महावीर दर्शन' प्राप्त हुआ और इसे वर्तमान में परिदर्शित करानेवाले युगदृष्टा – युगप्रधान "परमपुरुष प्रभु सद्गुरु परमज्ञान सुखधाम" ऐसे परमकृपालुदेव श्रीमद् राजचन्द्र का सु-शरण मिला :–

"सफळ थयुं भव म्हारुं हो कृपाळुदेव !
पामी शरण तमारुं हो कृपाळुदेव !
कळिकाळे आ जंबु-भरते, देह धर्यो निज-पर-हित शरते,
टाळ्युं मोह-अँधारुं हो कृपाळुदेव ! ..... सफळ – १
धर्म-ढोंगने दूर हटावी, आत्मधर्मनी ज्योत जगावी,
कर्युं चेतन-जड न्यारुं हो कृपाळुदेव ! ..... सफळ – २
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-रमणता, त्रिविध कर्मनी टाळी ममता,
सहजानंद लह्युं प्यारुं हो कृपाळुदेव ! ..... सफळ – ३

(– यो. यु. श्री. सहजानंदघनजी : "सहजानंद सुधा")

॥ ॐ शांति: शांति: शांति: ॥

1580, कुमारस्वामी ले आउट, बेंगलोर-560078 : 21.5.2011 — प्रा. प्रतापकुमार ज. टोलिया
20.4.2016 महावीर जयंती !

सन्दर्भ : सम्बन्धित अन्य स्व-कृतियाँ : शोधपत्र, पुस्तकादि + सम्पादित कृतियाँ (कुछ अप्रकाशित)

(1) महासैनिक (2) अनंत की अनुगूंज (3) दक्षिणापथ की साधनायात्रा (4) कर्णाटक में जैनधर्म (5) कर्णाटक की संस्कृति साहित्य का जैन प्रदान (6) भद्रबाहु से भद्रमुनि तक (7) Role of Jainism in Vijaynagar Empire (8) वर्तमान के एक परमयोगी (9) उड़ीसा के जैन-बौद्ध सेमिनार में (10) जैन एवं बौद्ध दर्शन में आत्म-तत्त्व (11) सृष्टि और ईश्वर अकर्तृत्व (12) आत्मतत्त्व आत्मसिद्धि में (13) ध्यान एवं श्रीमद् राजचन्द्र (14) Meditation & Jainism (15) Jain point of Meditation & yoga (16) श्रीमद् राजचन्द्र (AIR-आकाशवाणी वार्ता) (17) भगवान महावीर के जीवन में महिलाओं का स्थान एवं योगदान (AIR) (18) जैन परम्परा में नारी का गौरवपूर्ण स्थान एवं योगदान (19) जैन संस्कृति की रक्षा और विकास में नारी का योगदान I (20) महावीर दर्शन में नारी का योगदान (– सुमित्रा) (21) संलेखना – आत्मसाक्षात्कार की आनन्दकला (22) शिकागो विश्वधर्म परिषद् में जैनधर्म का योगदान (पं. सुखलालजी लेख + शांतिलाल सेठ) (23) प्रज्ञाचक्षु का दृष्टि-प्रदान (संस्मरण) (24) प्रज्ञा-संचयन (पं. सुखलालजी) के चिंतनलेख (हिंदी में अनूदित) (25) Selected Works of Dr. Pandit Sukhlalji (26) प्रज्ञा-वाणी (पं. सुखलालजी + पं. दलसुखभाई + डा. नथमलजी वाणी) (27) विदेशों में जैनधर्म प्रभावना (28) श्री कल्पसूत्र प्रवचनधारा (सहजानंदघनजी कैसेट + सीडी.) श्री कल्पसूत्र प्रवचन प्रस्तुति (स्वयं : हिन्दी/गुजराती) (29) दशलक्षण धर्म : " (सीडी) (30) अंधेरे में उजाला : ध्यानरहस्य (31) ध्यानस्थ होते थे जब महावीर (32) Mahaveer – magnificence (33) Universal Visionaries of Non violence. Bhagwan Mahaveer. Master Teacher of the World (34) अर्धभूमि का अनाहतनाद (35) परमगुरु प्रवचन माला : पांच समवाय आत्मभान – वीतरागता, साकार-निराकार, आध्यात्मिकता, समाधिमरण की कला, आत्मसाक्षात्कार का अनुभवक्रम, श्रीमद् राजचन्द्र जीवन आदि 25 अन्य कैसेट–सीडी का सेट : सहजानंदघनजी की प्रबल अनुभूत वाणी में (36) अमरेली से अमरिका तक (37) जनजनका जैन वास्तुसार (38) पारुल प्रसून (39) Profiles of Parul (40) संपादन-अनुवाद : द्विभाषी आत्मसिद्धि : श्रीमद् राजचन्द्र (41) सप्तभाषी आत्मसिद्धि : श्री रा. (42) पंचभाषी पुष्पमाला : श्री रा. (43) स्वर्णिम सर्वोदय एवं समग्रता से सप्तभाषी तक की विमलाजी की जीवनयात्रा (दे) (44) अंतर्यात्रा – विमलसरिता सह (45) Voyage within with Vimalajee (46) स्थितप्रज्ञ के साथ (विनोबाजी सह) (47) गुरुदेव के संग (भावानुवाद) (48) प्रकटी श्रमदान की गंगा (49) दादीपथने पगले पगले (50) पावापुरी की पावनधरती से (51) जिनभक्ति की अनुभूतियाँ (52) संतशिष्यनी जीवनसरिता (53) Saints of Gujarat (54) Jainism in present age

शताधिक में से चन्द प्रमुख रिकार्ड/कैसेट/सीडी कृतियाँ : (1) आत्मसिद्धि (2) राजपद (3) परमगुरु पद (4) महायोगी आनन्दघन के पद (5) अनुभववाणी (6) महावीर दर्शन (H/E) (7) वीरवन्दना-जिनवन्दना (8) भक्तामर स्तोत्र (9) ध्यान संगीत (10) प्रभात मंगल (11) जयजिनेन्द्र (12) आत्मस्तोत्र (13) आनन्दलोक !

॥ ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति: ॥